International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 05-04-2023, Accepted: 20-04-2023, Published: 08-05-2023
Volume 9, Issue 3, 2023, Page No. 11-12

रस स्वरुप विवेचन के सन्दर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल की समीक्षा दृष्टि

डॉ अजय कुमार श्रीवास्तव
एसोसिएट प्रोफेसर (हिंदी) एवं डीन, राजकीय शिक्षा कॉलेज, चंडीगढ, भारत

सारांश
भारतीय साहित्य में रस की महत्ता को नाकारा नहीं जा सकता रस कविता का मान दंड है .आचार्य भारत से लेकर पंडित राज जगन्नाथ और आधुनिक काल में आचार्य राम चन्द्र शुक्ल जैसे प्रमुख समीक्षक भी रस को साहित्य के सन्दर्भ में अपनी विचारधारा सेसंपूर्ण हिंदी साहित्यको अनिवार्य मानते है भावो की सघनता और प्रभाव शीलता के बिना कविता का अस्तित्व ही नहीं है प्रस्तुत शोध में रस की प्रासंगिकता कविता के लिए क्यों आवश्यक है ? तथा इसकी मार्मिकता से जनसाधारण किस तरह प्रभावित होता हैतथा लोक व्यवहार की कसौटी पर इसका मुल्यांकन किस प्रकार किया जायेगा .आचार्यशुक्ल के समीक्षा दृष्टि में इस गंभीर विषय को द्रष्टव्य किया गया है

मूल शब्दः रस, तादात्म्य, साधारणीकरण, लोक व्यवहार, समीक्षा

भारतीय वांग्मय तथा उसकी समीक्षा दृष्टि विश्व की अनमोल धरोहर है । सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में रस सम्प्रदाय की महत्ता सर्वोपरि है । आचार्य भरत से लेकर पंडित राज जगन्नाथ तक विगत दो हजार वर्षो की विशेष ज्ञान धारा में रस को स्वीकारने वाले और इतर संप्रदाय का होने के बावजूद रस की सत्ता और सामर्थ्य को मानने वालो ने सभी ने अंततः रस को काव्य की आत्मा के रूप में स्वीकार किया है, और यह बात अनेक सम्प्रदायों के आचार्यो द्वारा अन्य सम्प्रदायों के साथ रस को गहन कसौटी पर परख कर स्वीकार किया गया है ।, बिना रस के उच्च काव्य को स्वीकार ही नहीं किया गया, इसीलिए आचार्य राम चंद्र शुक्ल ने अपने साहित्य में रस की कसौटी को लोकव्यवहार पर रख कर परखने की कोशिश की और काव्य की आत्मा के रूप में रस की सम्भावनाओ को स्वीकार करने में सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों समीक्षाओ की कसौटी पर कस कर देखने का प्रयास किया है, क्योकि आचार्य शुक्ल जी से पहले और रीतिकाल के बाद इस विषय पर संस्कृत और हिंदी साहित्य के विद्वानों द्वारा गंभीरता से विचार ही नहीं किया गया।
आचार्य भरत से लेकर पंडित राज जगन्नाथ तक अबाध गति से चली आरही रस की परम्परा कालांतर में क्षीण होती गयी। उस समय जो भी आचार्य रस समर्थक थे वह भी रस पर कोई ठोस चिंतन प्रस्तुत नहीं कर पाएं उनका काम सिर्फ अपने पूर्व वर्ती आचार्यो के कार्यो को उलट फेर कर अपने साहित्य के माध्यम से समाज के सामने प्रस्तुत करना था। कोई मौलिक सिद्धांत प्रस्तुत करने अथवा रस को जोर दार रूप में प्रमाण सहित प्रस्तुत करने में असमर्थ रहे। आचार्य पंडित जगन्नाथ के पश्चात् विगत तीन शताब्दियों से प्रस्तुत यह चिंतन परंपरा आधुनिक काल में आचार्य राम चंद्र शुक्ल के माध्यम से एक बार फिर सशक्त रूप से उभर कर सामने आयी तथा अपने पूर्व वर्ती आचार्यो की चिंतन की समीक्षा के साथ कुछ नए आयामों में एक बार फिर भारतीय साहित्य में चिंतन का केंद्र बनी । आचार्य शुक्ल इस प्रभात के नवीन प्रभाकर थे। अन्य विद्वानों के द्वारा रस सिधान्तो का अत्यंत प्रामाणिक शात्र सिद्ध विवेचन किया गया है, इसमें संदेह नहीं और यह भी निर्विवाद है की संस्कृत काव्यशात्र में इन सब की आचार्य शुक्ल की अपेक्षा गहरी पैठ थी किन्तु उनमे से अधिकांश विद्वान रस शात्र के प्रस्तोता और व्याख्या कार ही अधिक थे जबकि आचार्य शुक्ल ने रस तत्व का स्वतंत्र रूप से पुनर्विचार किया और यह स्वतंत्र चिंतन ही उन्हें भारत के आधुनिक आलोचकों में शीर्ष स्थान पर प्रतिष्ठित करता है १ ।

विषय–विवेचन: आचार्य शुक्ल रसवादी परम्परा के सैद्धांतिक आचार्य न हो कर व्यवहारवादी आचार्य माने जाते है क्योकि अपनी रस मीमांसा में उन्होंने रस के व्यावहारिक रूप को प्रासंगिक माना है, इसीलिए उन्होंने साहित्य के विभिन्न उदाहरणों द्वारा इसका पुरजोर समर्थन भी किया ५ शुक्ल जी के प्रायः सभी सैद्धांतिक निबंधों के प्रेरक प्रसंगो, तुलसी, सूर, बिहारी, घनानंद, जायसी आदि कवियों की व्यावहारिक आलोचना में उनकी विचारधारा आसानी से मिल जाती है।
रस सिद्धांत के सन्दर्भ में शुक्ल जी की प्रमुख स्थापनाये इस प्रकार है:–

1. रस भावयोग की अवस्था का नाम है । इसी को अपने प्रसिद्ध सूत्र में उन्होंने ह्रदय की मुक्तावस्था कहा है । जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार ह्रदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है २ ।
2. प्रत्येक काव्यप्रसंग के साथ ह्रदय की चित्तवृत्ति का पूर्ण तादात्म्य नहीं होता –– विविध सन्दर्भ में यह तादात्म्य मात्राभेद के साथ घटित होता है । अतः रस की अखंड कल्पना की अपेक्षा रस कोटियों का विचार ही अधिक तर्क सम्मत है।
3. रस प्रिक्रिया के अंतर्गत आलम्बन या आलंबन धर्म का साधारणीकरण ही प्रमुख रूप से घटित होता है ।

उपरोक्त तीनो चिंतन आचार्य शुक्ल के चिंतन के व्यावहारिक पक्ष के ही परिणाम है। आचार्य शुक्ल ने तुलसी, सूर, जायसी आदि महाकवियों के काव्य की समीक्षा करते हुए प्रायः उन स्थलों को ज्यादा महत्व दिया जहा का प्रसंग शेष सृष्टि के साथ रागात्मक सम्बद्ध से जुड़ता है तथा वह मानवमात्र का सुख दुःख बन जाता है, आचार्य शुक्ल रामवनवास, लक्ष्मणशक्ति, कृष्णप्रवास, नागमती विरह आदि संदर्भो में अखंड आनंद की अनुभूति को अनुभव सिद्ध नहीं मानते। आनंद पर सीधा प्रहार करते हुए उन्होंने एक स्थान पर बहुत स्पष्ट लिखा है––––क्या रोहित की मृत्यु पर शैव्या का विलाप हमारे आंसू नहीं दांत निकल पड़ते हैं ३। लेकिन फिर भी शुक्लजी का विवेक इतना पुष्ट था कि करुण प्रसंगो में मात्र दुःख कि ही अनुभूति स्वीकार करना उनके लिए संभव नहीं था। शास्त्र सिद्ध रस से अखंड आनंद और प्रत्यक्ष अनुभव के वैकल्य के द्वंव्दकी समाहिति के लिए शुक्लजी ने ह्रदय की मुक्तावस्था की परिकल्पना की है, जिसका एक सीमांत सिद्धांत भट्टनायक सविंद विभ्रांति और दूसरा आई ऐ रिचड्र्स के अंतर्वृत्तियो का सामंजस्य सिद्धांत के अनुचिंतन से प्राप्त नहीं किया है। इस सम्भावना से

इंकार नहीं किया जा सकता की भारतीय सिद्धांत के दार्शनिक स्तर पर अनुमोदन प्राप्त कर उन्हें अपनी स्थापना के आश्वत होने का सुयोग मिला है ४। बिलकुल यही बात आचार्य शुक्ल के निबंध साधारणीकरण में भी दिखाई पड़ती है पर वास्तव में वह क्षेत्र चिंतन का अंग न हो कर शुक्ल जी व्यावहारिक दृष्टिकोण का ही अंग है। साधारणीकरण की जरुरत तो शुक्लजी के काव्य में व्यक्तिवादी प्रवित्ति का विरोध करने में करना पड़ा जिसका उदहारण उन्होंने रामचरितमानस, पद्मावत, सूरसागर जैसे श्रेष्ठ काव्यों के अभिजात्य वादी मूल्य के महत्व और प्रतिष्ठा के लिए ही किया है, यह बात शुक्लजी के निबंध "साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्रयवाद से जान पड़ती है ५। साथ ही यहभी ज्ञात हो जाता है कि साधारणीकरण का सीधा विरोध व्यक्तिवादसे न हो कर व्यक्ति वैचित्र्यवाद से ही है ६। वह तो रस को लोकमान्य कि भूमि पर ही प्रतिष्ठित करते है। शुक्लजी रस दशा सम्बन्धी विचारो को जिनके उद्धरण (जो उनके रस विवेचन सम्बन्धी निबंधों में मिलते हैं) उनके अंशो में स्पष्ट करते है। रसानुभूति कि स्थिति में रसभक्ति (आश्रय और सामाजिक) कि पृथक सत्ता का उन्होंने तिरोभाव किया है और मनुष्य को स्वार्थ सम्बन्धो से मुक्त हो कर लोक सामान्य की भाव भूमि पर पहुंचना अनिवार्य बताया है ७। आचार्य शुक्ल ने हमेशा ही कविता को लोक की भाव भूमि पर ही परखा है। वह इसे रस से जोड़ते समय इस बात का पूरीतरह से ध्यान रखते है कि यदि काव्य कि आत्मा रस है तो रस का प्रसार लोक भूमि पर होना अनिवार्य है तभी रस का यथार्थ महत्व है। कविता वही है जिसमे एक ही व्यक्ति को नहीं किन्तु मनुष्य मात्र को रस प्राप्त हो। मनुष्य के ह्रदय की अतल गहराई में सर्वव्यापक करुणा रस का जो एक श्रोत बहता है जब तक वाचक को उसमे अवगाहन न किया जायतब तक कविता नहीं उपजती।

रस कोटि की परिकलवाना का सम्बन्ध भी काव्य विवेचन की इसी प्रक्रिया के साथ है, काव्य के विदग्ध अध्येता के रूप में शुक्ल जी को यह प्रतीति हुई की कबीर, बिहारी, घनान्द, सूर और तुलसीके काव्य के निष्पन्न रसानुभूति में प्रकृति का नहीं तो कम से कम मात्रा का भेद अवश्य है। इस समस्या का समाधान भी उन्हें साधारणीकरण की प्रक्रिया में मिलता है–– और वह यह की प्रत्येक काव्य वस्तु के साथ ह्रदय की चेतना तादात्म्य का अनुभव करती है वहां रस का पूर्ण परिपाक रहता है और जहाँ इस तादात्म्य में अपूर्णता रहती है वहां उसीक्रम से रस की कोटियां बन जाती है। जिस काव्य प्रसंग में आलम्बन का स्वरुप निरूपण इतना परिपूर्ण होता है कि वह प्रत्येक ह्रदय के चित्त में उसी भाव का उद्रेक कर सके जिसकी अभिक्ति स्वयं आश्रय कर रहा है, वहां रस चक्र पूरा हो जाता है और यही रस कि उत्तम कोटि मानते हैं प इन अवर कोटियों में शुक्ल जी के मत से प्रमाता की रसानुभूति तो होती हैं किन्तु उसमे काव्यप्रसंग के साथ प्रमाता के तादात्म्य भेद के अनुसार मात्रा भेद रहता हैं।

इस तरह आचार्य शुक्ल जी का रस विवेचन सिद्धांत शात्रसिद्ध न होकर मूलतः शात्र निष्ठ ही हैं। लेकिन इससे यह अर्थ न लिया जायकि उसके पीछे कोई सुयोक्ति विधान नहीं हैं प किसी स्वंतत्र वाद या सिद्धांत तंत्र कि उद्भावना न करने पर भी रस के विषय में उनका एक निश्चित तर्क विधान हैं प जैसे शुक्ल जी ने अपने सिद्धांत सूत्रों का निष्कर्ष प्रायः श्री राम चरित मानस के अध्ययन विवेचन में किया हैं। रस सूत्र के विषय में यह और भी अधिक सत्य हैं पमानस मंथन के सार रूप में तत्व चिंतन के स्तर पर उन्होंने ब्रह्म की सगुण कल्पना अर्थात चराचर में व्याप्त ब्रह्म की व्यक्त सत्ता की चेतना प्राप्त की है। काव्य चिंतन में अनुभूति के स्तर पर यही चेतना आलम्बन परक रस विवेचन और अब्भिक्ति के स्तर पर विम्बात्मक अभिव्यंजना में प्रति फलित हुई है। यहाँ यह प्रसंग भी उठ सकता हैं कि रस– विवेचन की प्रक्रिया पद्धति आचार्य शुक्ल की शक्ति का द्योतक है या सीमा का ? इसका उत्तर यह हो सकता है कि शुक्ल जी का चिंतन स्वाधीन चिंतन है बशर्ते वह तर्क पोषित है तो उसे शक्ति का द्योतक ही होना चाहिए प साथ ही साथ यह बात भी मायने रखती है कि आचार्य शुक्ल की यह मान्यता पूरी तरह से व्यावहारिक है तथा प्राप्त निष्कर्ष सामान्य तह अधिक प्रभावित करते हैं तथा वह प्रयोग कि कसौटी पर भी व्यावहारिक लगते हैं। आधुनिक समीक्षा पर शुक्ल जी का व्यापक प्रभाव जो दिखलाई पड़ता हैं वह निश्चय ही आचार्य शुक्ल के महत्व को स्पष्ट करता हैं परन्तु यह भी ध्यान देने कि बात हैं कि शताब्दियों के सूक्ष्म – गहन चिंतन से परिपुष्ट भारतीय रस सिद्धांत की दार्शनिक तथा मनोवैज्ञानिक आधार भूमि इतनी दृढ हैं कि उसे आसानी से हिलाया नहीं जा सकता प शुक्ल जी ने अपने रस विवेचन प्रक्रिया का विवेचन जिस स्तरपर किया हैं जो विचलन प्रस्तुत किये हैं वे प्रभावी होने पर भी एकदम ला जवाब नहीं हैं उनका उत्तर यथा संभव शुक्ल जी के समकालीन तथा परवर्ती विचारक यथा प्रसंग देते रहेगें।

निष्कर्ष

संस्कृत साहित्यशात्र में रस की व्यापक चर्चा के साथ आचार्यों ने रस को काव्य की आत्मा के रूप में स्थापित करने का तर्क संगत और उचित प्रमाण प्रस्तुत किया है, व्यावहारिक रूप में यह बात आनंद से परे दिखलाई पड़ती परन्तु अत्यधिक संवेगो का परिक्षालन हो जाने पर अंततः वह सुख ही प्रदान करते हैं और सामाजिक, दुखो के आवेग से निकल अपने आप को सामान्य महसूस करता है, आचर्य शुक्ल इस बात पर आपत्ति दर्ज करते हैं और रस को वह लोक व्यव्हार के स्तर पर रस को सुख दुःख युक्त मानते है, इस सन्दर्भ में शुक्लजी का तर्क अपने आप में सोचने और देखने पर रस के सैद्धांतिक पक्ष पर असहमति व्यक्त करता है, परन्तु आचार्य शुक्ल जी का समीक्षा मान दंड ष्लोक व्यवहार की कसौटी पर शास्त्रीय सिधान्तो की परख "आनेवाली पीढ़ी को सोचने और समंझने पर मजबूर करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. डा. नगेन्द्रः भारतीय समीक्षा और आचार्य शुक्ल की काव्य दृष्टि, पृष्ठ ६४
2. आचार्य राम चंद्र शुक्ल रू रसमीमांसा, पृष्ठ ४८
3. वही, पृष्ठ ४८
4. डॉ नगेन्द्रः भारतीय समीक्षा और आचार्य शुक्ल की काव्य दृष्टि, पृष्ठ ६५
5. आचार्य शुक्लः साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्रयवाद, पृष्ठ ६
6. वही, पृष्ठ ६, ७
7. सुरेश सिन्हाः हिंदी आलोचना का विकास, पृष्ठ १०५
8. आनंद शंकर वप्रू भाई ध्रुवः कविता, पृष्ठ ३५
9. डॉ नगेन्द्रः भारतीय समीक्षा और आचार्य शुक्ल की काव्य दृष्टि, पृष्ठ ६५